दिगम्बर जैन पुराण साहित्य

पं. पन्नालालजी जैन, साहित्याचार्य, सागर

भारतीय धर्मग्रंथों में पुराण शब्द का प्रयोग इतिहास के साथ आता है। कितने ही लोगों ने इतिहास और पुराण को पञ्चम वेद माना है। चाणक्य ने अपने अर्थशास्त्र में इतिहास की गणना अथर्ववेद में की है और इतिहास में इतिवृत, पुराण, आख्यायिका, उदाहरण, धर्मशास्त्र तथा अर्थशास्त्र का समावेश किया है इससे यह सिद्ध होता है कि इतिहास और पुराण दोनों ही विभिन्न हैं। इतिवृत का उल्लेख समान होने पर भी दोनों अपनी विशेषता रखते हैं। कोषकारों ने पुराण का लक्षण निम्न प्रकार माना है—

जिसमें सर्ग, प्रतिसर्ग, वंश, मन्वन्तर और वंश परम्पराओं का वर्णन हो वह पुराण है। सर्ग प्रतिसर्ग आदि पुराण के पांच लक्षण हैं। इतिवृत्त केवल घटित घटनाओं का उल्लेख करता है; परन्तु पुराण महापुरुषों की घटित घटनाओं उल्लेख करता हुआ उनसे प्राप्य फलाफल, पुण्य-पाप का भी वर्णन करता है, तथा साथ ही व्यक्ति के चरित्र निर्माण की अपेक्षा बीच बीच में नैतिक और धार्मिक भावनाओं का भी प्रदर्शन करता है। इतिवृत्त में केवल वर्तमान कालिक घटनाओं का उल्लेख रहता है, परंतु पुराण में नायक के अतीत अनागत भावों का भी उल्लेख रहता है और वह इसलिये कि जनसाधारण समझ सकें कि महापुरुष कैसे बना जा सकता है? अवनत से उन्नत बनने के लिये क्या क्या त्याग और तपस्याएं करनी पडती है? मनुष्य के जीवन-निर्माण में पुराण का बडा ही महत्वपूर्ण स्थान है। यही कारण है कि उसमें जनसाधारण की श्रद्धा आज भी यथापूर्व अक्षुण्ण है।

जैनेतर समाज का पुराणसाहित्य बहुत विस्तृत है। वहां १८ पुराण माने गये हैं जिनके नाम निम्न प्रकार है—

१ मत्स्य पुराण, २ मार्कण्डेय पुराण, ३ भागवत पुराण, ४ भविष्य पुराण, ५ ब्रह्माण्ड पुराण, ६ ब्रह्मवैवर्त पुराण, ७ ब्राह्म पुराण, ८ वामन पुराण, ९ वराह पुराण, १० विष्णु पुराण, ११ वायु व शिव पुराण, १२ अग्नि पुराण, १३ नारद पुराण, १४ पद्म पुराण, १५ लिङ्ग पुराण, १६ गरूड पुराण, १७ कूर्म पुराण और १८ स्कन्द पुराण।

ये अठारह महापुराण कहलाते हैं। इनके सिवाय गरुडपुराण में १८ उपपुराणों का भी उल्लेख आया है जो कि निम्न प्रकार है—१ सनत्कुमार, २ नारसिंह, ३ स्कान्द, ४ शिवधर्म, ५ आश्चर्य, ६ नारदीय, ७ कापिल, ८ वामन, ९ ओशनस, १० ब्रह्माण्ड, ११ वारुण, १२ कालिका, १३ माहेश्वर, १४ साम्ब, १५ सौर, १६ परीशर, १७ मारीच और १८ भार्गव।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

देवी भागवत में उपर्युक्त स्कन्द, वामन ब्रह्माण्ड, मारीच और भार्गव के स्थान में क्रमशः शिव, मानव, आदित्य, भागवत और वासिष्ठ इन नामों का उल्लेख आया है।

इन महापुराणों और उपपुराणों के सिवाय अन्य भी गणेश, मौद्गल, देवी, कल्की, आदि अनेक पुराण उपलब्ध हैं। इन सब के वर्णनीय विषयों का बहुत ही विस्तार है। कितने ही इतिहासज्ञ लोगों का अभिमत है कि-इन आधुनिक पुराणों की रचना प्रायः इसवीय सन् ३०० से ८०० के बीच में हुई है।

जैसा कि जैनेतर साहित्य में पुराणों और उपपुराणों का विभाग मिलता है वैसा जैन साहित्य में नहीं पाया जाता है। फिर भी संख्या की दृष्टि से यदि विचार किया जावे तो चौबीस तीर्थंकर, १२ चक्रवर्ती, ९ नारायण, ९ प्रतिनारायण और ९ बलभद्रों की अपेक्षा जैन साहित्य में भी पुराणों की संख्या बहुत है। परन्तु जैन साहित्य में इन सब के पुराणों का संमिलित रीति से ही संकलन मिलता है। जैन समाज में जो भी पुराण साहित्य उपलब्ध है वह अपने ढंग का निराला है। जहां अन्य पुराणकार इतिवृत्त की यथार्थता सुरक्षित नहीं रख सके हैं वहा जैन-पुराणकारों ने इतिवृत्त की यथार्थता को अधिक सुरक्षित रखा है। इसीलिये आज के निष्पक्ष विद्वानों का यह स्पष्ट मत है कि हमें प्राक्कालीन भारतीय परिस्थिति को जानने के लिये जैन पुराणों से-उनके कथा-ग्रन्थों से जो सहाय्य प्राप्त होता है वह अन्य पुराणों से नहीं।

यहा मैं कुछ दिगम्बर जैन पुराणों की सूची दे रहा हूं जिससे जैन समाज समझ सके कि अभी हमने कितने चमकते हुए हीरे तिजोडियों में बन्द कर रक्खे हैं—

यह सूची पं. परमानन्दजी शास्त्री से प्राप्त हुई है।

	पुराण नाम	कर्ता	रचना संवत
१	पद्म पुराण—पद्म चरित	रविषेण	७०५
२	महा पुराण (आदि पुराण)	जिनसेन	नवीं शती
३	उत्तर पुराण	गुणभद्र	१० वी शती
४	अजित पुराण	अरुणमणि	१७१६
५	आदि पुराण (कन्नड)	कवि पंप	—
६	,,	भ. चन्द्रकीर्ति	१७ वी शती
७	,,	भ. सकलकीर्ति	१५ वी शती
८	उत्तर पुराण	,,	,,
९	कर्णामृत पुराण	केशवसेन	१६८८
१०	जयकुमार पुराण	ब्र. कामराज	१५५५
११	चन्द्रप्रभ पुराण	कवि अगास देव	—
१२	चामुण्ड पुराण (कन्नड)	चामुण्डराय	शक ९८०
१३	धर्मनाथ पुराण (क)	कवि बाहुबली	—

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

	पुराण नाम	कर्ता	रचना संवत
१४	नेमिनाथ पुराण	ब्र. नेमिदत्त	१५७५
१५	पद्मनाथ पुराण	भ. शुभचन्द्र	१७ वी शती
१६	पउम चरिय (अपभ्रंश)	चतुर्मुख देव	—
१७	,,	स्वयंभू देव	—
१८	पद्म पुराण	भ. सोमसेन	—
१९	,,	भ. धर्मकीर्ति	१६५६
२०	,, (अपभ्रंश)	कवि रइधू	१५–१६ शती
२१	,,	भ. चन्द्रकीर्ति	१७ वी शती
२२	,,	ब्रह्म जिनदास	१५–१६ शती
२३	पाण्डव पुराण	भ. शुभचन्द्र	१६०८
२४	,, (अपभ्रंश)	भ. यशकीर्ति	१४९७
२५	,,	भ. श्रीभूषण	१६५७
२६	,,	वादिचन्द्र	१६५८
२७	पार्श्व पुराण (अपभ्रंश)	पद्मकीर्ति	९८९
२८	,,	कवि रइधू	१५–१६ शती
२९	,,	चन्द्रकीर्ति	१६५४
३०	,,	वादिचन्द्र	१६५८
३१	महा पुराण	आचार्य मलिषेण	११०४
३२	,, (अपभ्रंश)	महाकवि पुष्पदन्त	—
३३	मल्लिनाथ पुराण (क)	कवि नागचन्द्र	—
३४	पुराणसार	श्रीचन्द्र	—
३५	महावीर पुराण	कवि असग	९१०
३६	,,	भ. सकलकीर्ति	१५ वी शती
३७	मल्लिनाथ पुराण	,,	,,
३८	मुनिसुव्रत पुराण	ब्रह्म कृष्णदास	—
३९	,,	भ. सुरेन्द्र कीर्ति	—
४०	वागर्थसंग्रह पुराण	कवि परमेष्ठी	—
४१	शान्तिनाथ पुराण	कवि असग	१० वी शती
४२	,,	भ. श्रीभूषण	१६५९
४३	श्री पुराण	भ. गुणभद्र	—

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

	पुराण नाम	कर्ता	रचना संवत
४४	हरिवंश पुराण	पुन्नाटसंघीय जिनसेन	शकसंवत ७०५ (वि. सं. ८४०)
४५	,, (अपभ्रंश)	स्वयंभू देव	—
४६	,, ,,	चतुर्मुख देव	—
४७	,,	ब्र. जिनदास	१५–१६ शती
४८	,, (अपभ्रंश)	भ. यशकीर्ति	१५०७
४९	,,	भ. श्रुतकीर्ति	१५५२
५०	,, (अपभ्रंश)	कवि रइधू	१५–१६ शती
५१	,,	भ. धर्मकीर्ति	१६७१
५२	,,	कवि रामचन्द्र	१५६० के पूर्व

इनके अतिरिक्त चरित ग्रन्थ हैं जिनकी संख्या पुराणों की संख्या से अधिक है और जिनमें 'वराङ्ग चरित', 'जिनद चरित', 'जसदर चरिऊ', 'णायकुमार चरिउ' आदि कितने महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ सम्मिलित हैं। पुराणों की उक्त सूचि में रविषेण का पद्मपुराण, जिनसेन का महापुराण, गुणभद्र का उत्तर पुराण और पुन्नाटसंघीय जिनसेन का हरिवंश पुराण सर्वश्रेष्ठ पुराण कहे जाते हैं। इनमें पुराण का पूर्ण लक्षण घटित होता है। इनकी रचना पुराण और काव्य दोनों की शैली से की गई है, इनकी अपनी–अपनी विशेषताएँ हैं जो अध्ययन के समय पाठक का चित्त अपनी ओर बलात् आकृष्ट कर लेती है।

जैन पुराणों का उद्गम :—

यति वृषभाचार्यने 'तिलोय पण्णत्ति' के चतुर्थ अधिकार में तीर्थंकरों के माता पिता के नाम, जन्म नगरी, पन्चकल्याणक तिथि अन्तराल, आदि कितनी ही आवश्यक वस्तुओं का संकलन किया है। जान पडता है कि हमारे वर्तमान पुराणकारों ने अधिकांश उस आधार को दृष्टिगत रखकर पुराणों की रचनाएं की हैं। पुराणों में अधिकतर त्रेसठ शलाका पुरुषों का चरित्र चित्रण है। प्रसंगवश अन्य पुरुषों का भी चरित्र चित्रण हुआ है।

इन पुराणों की खास विशेषता यह है कि इनमें यद्यपि काव्य शैली का आश्रय लिया गया है तथापि इतिवृत्त की प्रामाणिकता की ओर पर्याप्त दृष्टि रखी गई है। उदाहरण के लिए 'रामचरित' ले लिजिए। रामचरित पर प्रकाश डालनेवाला एक ग्रन्थ 'वाल्मीकि रामायण' है और दूसरा ग्रन्थ रविषेण का 'पद्मचरित' है। दोनों का तुलनात्मक दृष्टि से अध्ययन करने पर इसका तत्काल स्पष्ट अनुभव होता है कि वाल्मीकि ने कहां कृत्रिमता लाई है। श्री डॉक्टर हरिसत्य भट्टाचार्य, एम्. ए., पीएच्. डी. ने 'पौराणिक जैन इतिहास' शीर्षक से एक लेख 'वर्णी अभिनन्दन ग्रन्थ' में दिया है उसमें उन्होंने जगह जगह

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

घोषित किया है कि अमुक विषय में जैन मान्यता सत्य है। जैनाचार्यों ने स्त्री या पुरुष जिसका भी चरित्र चित्रण किया है वह उस व्यक्ति के अन्तस्थल को सामने रख देने वाला है।

इस संदर्भ में जिनसेन के महापुराण, गुणभद्र के उत्तरपुराण, रविषेण के पद्मपुराण और पुन्नाटसंघीय जिनसेन के हरिवंश पुराण पर कुछ प्रकाश डालना आवश्यक जान पडता है—

महापुराण

महापुराण के दो खण्ड हैं, प्रथम आदिपुराण या पूर्वपुराण और द्वितीय उत्तर पुराण। आदिपुराण ४७ पर्वों में पूर्ण हुआ है जिसके ४२ पर्व पूर्ण तथा ४३ वे पर्व के ३ श्लोक भगवज्जिनसेनाचार्य के द्वारा निर्मित हैं और अवशिष्ट ५ पर्व तथा उत्तर पुराण श्री जिनसेनाचार्य के प्रमुख शिष्य श्रीगुणभद्राचार्य के द्वारा विरचित है।

आदिपुराण, पुराणकाल के सन्धिकाल की रचना है अतः यह न केवल पुराण ग्रन्थ है अपितु काव्य ग्रन्थ भी है, काव्य ही नहीं महाकाव्य है। महाकाव्य के जो लक्षण हैं वे सब इसमें प्रस्फुटित हैं। श्रीजिनसेनाचार्य ने प्रथम पर्व में काव्य और महाकाव्य की चर्चा करते हुए निम्नाङ्कित भाव प्रकट किया है—

'काव्य स्वरूप के जाननेवाले विद्वान्, कवि के भाव अथवा कार्य को काव्य कहते हैं। कवि का यह काव्य सर्व सम्मत अर्थ से सहित, ग्राम्यदोष से रहित, अलंकार से युक्त और प्रसाद आदि गुणों से सुशोभित होता है'।

'कितने ही विद्वान् अर्थ की सुन्दरता को वाणी का अलंकार कहते हैं और कितने ही पदों की सुन्दरता को। किन्तु हमारा मत है कि अर्थ और पद दोनों की सुन्दरता ही वाणी का अलंकार है'।

'सज्जन पुरुषों का जो काव्य अलंकारसहित शृङ्गारादि रसों से युक्त, सौन्दर्य से ओत प्रोत और उद्दिष्टतारहित अर्थात् मौलिक होता है वह सरस्वती देवी के मुख के समान आचरण करता है'।

जिस काव्य में न तो रीति की रमणीयता है, न पदों का लालित्य है, और न रस का ही प्रवाह है उसे काव्य नहीं कहना चाहिये, वह तो केवल कानों को दुःख देनेवाली ग्रामीण भाषा ही है।

जो अनेक अर्थों को सूचित करनेवाले पदविन्यास से सहित, मनोहर रीतियों से युक्त एवं स्पष्ट अर्थ से उद्भासित प्रबन्धों महाकाव्यों की रचना करते हैं वे महाकवि कहलाते हैं।

'जो प्राचीन काल से सम्बन्ध रखने वाला हो, जिसमें तीर्थंकर चक्रवर्ती आदि महापुरुषों के चरित्र का चित्रण किया गया हो तथा जो धर्म, अर्थ और काम के फलको दिखाने वाला हो उसे महाकाव्य कहते हैं'।[1]

'किसी एक प्रकरण को लेकर कुछ श्लोकों की रचना तो सभी कर सकते हैं परन्तु पूर्वापर का सम्बन्ध मिलाते हुए किसी प्रबन्ध की रचना करना कठिन कार्य है''।

१ पर्व १, श्लोक ९४-१०५।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

'जब कि संसार में शब्दों का समूह अनन्त है, वर्णनीय विषय अपनी इच्छा के अधीन है, इस स्पष्ट है और उत्तमोत्तम छन्द सुलभ है तब कविता करने में दरिद्रता क्या है?'।[1]

'विशाल शब्द मार्ग में भ्रमण करता हुआ जो कवि अर्थरूपी सघन बनों में घूमने से खेद खिन्नता को प्राप्त हुआ है उसे विश्राम के लिये महाकाव्यरूप वृक्षों की छाया का आश्रय लेना चाहिये'।

'प्रतिभा जिसकी जड है, माधुर्य, ओज, प्रसाद आदि गुण जिसकी शाखाएं हैं और उत्तम शब्द ही जिसके उज्वलपने है ऐसा यह महाकाव्य रूपी बृक्ष यशरूपी पुष्पमंजरी को धारण करता है'।

'अथवा बुद्धि ही जिसके किनारे है, प्रसाद आदि गुण ही जिसकी लहरें हैं, जो गुणरूपी रत्नो से भरा हुआ है, उच्च और मनोहर शब्दों से युक्त है, तथा जिसमें गुरु शिष्य परम्परा रूप विशाल प्रवाह चला आ रहा है ऐसा यह महाकाव्य समुद्र के समान आचरण करता है'।[1]

'हे विद्वान् पुरुषों? तुम लोग ऊपर कहे हुए काव्यरूपी रसायन का भरपूर उपयोग करो जिससे कि तुम्हारा यशरूपी शरीर कल्पान्त काल तक स्थिर रह सके'।

'उक्त उद्धरणों से यह स्पष्ट हो जाता है कि ग्रन्थ कर्ता की केवल पुराण रचना में उतनी आस्था नहीं है जितनी कि काव्य की रीति से लिखे हुए पुराण में धर्मकथा में—केवल काव्य में भी ग्रन्थकर्ता की आस्था वही मालूम होती, उसे वे सिर्फ कौतुकावह रचना मानते है। उस रचना से काम ही क्या, जिससे प्राणि का अन्तस्तल विशुद्ध न हो सके। उन्होंने पीठिका में आदि पुराण को 'धर्मानुबन्धिनी कथा' कहा है और बडी दृढता के साथ प्रकट किया है कि 'जो पुरुष यशरूपी धन का संचय और पुष्परूपी पण्य का व्यवहार–लेन देन करना चाहते हैं उनके लिये धर्मकथा को निरूपण करनेवाला यह काव्य मूलधन के समान माना गया है'।

वास्तव में आदि पुराण संस्कृत साहित्य का एक अनुपम रत्न है। ऐसा कोई विषय नहीं है जिसका इसमें प्रतिपादन न हो। यह पुराण है, महाकाव्य है, धर्मकथा है, धर्मशास्त्र है, राजनीतिशास्त्र है, आचार शास्त्र है और युग की आद्य व्यवस्था को बतलाने वाला महान् इतिहास है।

युग के आदि पुरुष श्री भगवान् वृषभदेव और उनके प्रथम सम्राट् भरत चक्रवर्ती आदि पुराण के प्रधान नायक हैं। इन्होंसे संपर्क रखने वाले अन्य कितने ही महापुरुषों की कथाओं का भी इसमें समावेश हुआ है। प्रत्येक कथानायक का चरित चित्रण इतना सुन्दर हुआ है कि वह यथार्थता की परिधि को न लांघता हुआ भी हृदयग्राही मालूम होता है। हरे भरे वन, वायु के मन्द मन्द झौके से थिरकती हुई पुष्पित पल्लवित लताएँ, कलकल करती हुई सरिताएं, प्रफुल्ल–कमलोद्भासित सरोवर, उतुङ्ग गिरिमालाएं, पहाडी निर्झर, बिजली से शोभित शामल घनघटाएँ, चहकते हुएँ पक्षी, प्राची में सिन्दुरस की अरुणिया को विखेरनेवाला सूर्योदय और लोकलोचनाल्हादकारी—चन्द्रोदय आदि प्राकृतिक पदार्थों का चित्रण कवि ने जिस चातुर्य से किया है वह हृदय में भारी आल्हाद की उद्भूति करता है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तृतीय पर्व में चौदहवें कुलकर श्री नाभिराज के समय गगणाङ्गण में सर्व प्रथम घनघटा छाई हुई दिखती है, उसमें बिजली चमकती है, मन्द मन्द गर्जना होती है, सूर्य की सुनहली रश्मियों के सम्पर्क से उसमें रंगबिरंगे इन्द्र धनुष दिखाई देते हैं, कभी मन्द, कभी मध्यम, और कभी तीव्र वर्षा होती है, पृथिवी जलमय हो जाती हैं, मयूर नृत्य करने लगते हैं, चिर सन्तप्त चातक संतोष की सांस लेते हैं और प्रवृष्ट वारिधारा वसुधा तल में व्याकीर्ण हो जाती हैं।

इस प्राकृतिक सौंदर्य का वर्णन कवि ने जिस सरसता और सरलता के साथ किया है वह एक अध्ययन की वस्तु है। अन्य कवियों के काव्य में आप यही बात क्लिष्ट–बुद्धिगम्य शब्दों से परिवेष्टित पाते है और इसी कारण स्थूल परिधान से आवृत कामिनी के सौन्दर्य की भ्रांति वहां प्रकृति का सौन्दर्य अपने रूप में प्रस्फुटित नहीं हो पाता है परन्तु यहां कवि के सरल शब्दविन्यास से प्रकृति की प्राकृतिक सुषमा परिधानावृत नहीं हो सकी है किन्तु सूक्ष्म–महीनवस्त्रावलि से सुशोभित किसी सुन्दरी के गात्र की अवदान आभा की भांती अत्यन्त प्रस्फुटित हुई है।

श्रीमती और वज्रजंघ के भोगोपभोगों का वर्णन भोगभूमि की भव्यता का व्याख्यान, मरुदेवी गात्र की गरिमा, श्री भगवान् वृषभदेव के जन्म कल्याणक का दृश्य, अभिषेक कालीन जल का विस्तार, क्षीर समुद्र का सौन्दर्य, भगवान् की बाल्यक्रीडा, पिता नाभिराज की प्रेरणा से यशोदा और सुनन्दा के साथ विवाह करना, राज्यपालन, कर्मभूमि की रचना, नीलांजना के विलय का निमित्त पाकर चार हजार राजाओं के साथ दीक्षा धारण करना, छह माह का योग समाप्त होनेपर आहार के लिये लगातार छह माहतक भ्रमण करना, हस्तिनापुर में राजा सोमप्रभ और श्रेयांस के द्वारा इक्षुरस का आहार दिया जाना, तपोलीनता, नमि विनमि की राज्य प्रार्थना, समूचे सर्ग में व्याप्त नाना वृत्तमय विजयार्धगिरि की सुन्दरता, भारत की दिग्विजय, भरत बाहुबली का युद्ध, राजनीति का उपदेश, ब्राह्मण वर्ण की स्थापना, सुलोचना का स्वयंवर, जयकुमार और अर्ककीर्ति का अद्भुत युद्ध, आदि आदि विषयों के सरस सालंकार–प्रवाहान्वित वर्णन में कविने जो कमाल किया है उससे पाठक का हृदयमयूर सहसा नाच उठता है। बरबस मुख से निकलने लगता है धन्य महाकवि धन्य ! गर्भ कालिक वर्णन के समय षट्कुमारिकाओ और मरु देवी के बीच प्रश्नोत्तर रूप में कवि ने जो प्रहेलिका तथा चित्रालंकार की छटा दिखलायी है वह आश्चर्य में डालनेवाली वस्तु है।

यदि आचार्य जिनसेन भगवान् का स्तवन करने बैठते हैं तो इतने तन्मय हुए दिखते हैं कि उन्हें समय की अवधि का भी भान नहीं रहता और एक–दो–नहीं अष्टोत्तर हजार नामों से भगवान् का सुयश गाते हैं। उनके ऐसे स्तोत्र आज सहस्र नाम स्तोत्र के नाम से प्रसिद्ध हैं। वे समवशरण का वर्णन करते हैं तो पाठक और श्रोता दोनों को ऐसा विदित होने लगता है मानों हम साक्षात समवशरण का ही दर्शन कर रहे हैं। चतुर्भेदात्मक ध्यान के वर्णन से पूरा पर्व भरा हुआ है। उसके अध्ययन से ऐसा लगने लगता है कि मानों अब मुझे शुक्लध्यान होनेवाला ही है और मेरे समस्त कर्मों की निर्जरा होकर मोक्ष प्राप्त हुआ ही चाहता है। भरत चक्रवर्ती की दिग्विजय का वर्णन पढते समय ऐसा लगने लगता है कि जैसे मैं गंगा, सिंधु, विजयार्ध, वृषभाचल और दीपाचल आदि का साक्षात् अवलोकन कर रहा हूं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

भगवान् आदिनाथ जब ब्राह्मी सुन्दरी पुत्रियों और भरत बाहुबली आदि पुत्रों को लोककल्याणकारी विविध विद्याओं की शिक्षा देते है तब ऐसा प्रतीत होता है मानों एक सुन्दर विद्यामंदिर है और उसमें शिक्षक के स्थानपर नियुक्त भगवान् शिष्य मण्डली को शिक्षा दे रहे हैं। कल्पवृक्षों के नष्ट हो जाने से त्रस्त मानव समाज के लिये जब भगवान् सान्त्वना देते हुए षट्कर्म की व्यवस्था भारत भूमिपर प्रचलित करते हैं, देश, प्रदेशनगर, स्व और स्वामि आदि का विभाग करते हैं तब ऐसा जान पडता है कि भगवान् संत्रस्त मानव समाज का कल्याण करने के लिये स्वर्ग से अवतीर्ण हुए दिव्यावतार ही है। गर्भान्वय, दीक्षान्वय, कर्त्रन्वय आदि क्रियाओं का उपदेश देते हुए भगवान् जहां जनकल्याणकारी व्यवहार धर्म का प्रतिपादन करते हैं वहां संसार की माया ममता से विरक्त कर इस मानव को परम निर्वृति की ओर जाने का भी उन्होंने उपदेश दिया है। सम्राट् भरत दिग्विजय के बाद आश्रित राजाओं को जिस राजनीति का उपदेश देते हैं वह क्या कम गौरव की बात है? यदि आज के जननायक उस नीति को अपना कर प्रजा का पालन करें तो यह निःसंदेह कहा जा सकता है कि सर्वत्र शान्ति छा जावे और अशान्ति के काले बादल कभी के क्षत-विक्षत हो जावें। अन्तिम पर्वों में गुणभद्राचार्य ने जो श्रीपाल आदि का वर्णन किया है उसमें यद्यपि कवित्व की मात्रा कम है तथापि प्रवाहबद्ध वर्णन शैली पाठक के मनको विस्मय में डाल देती है। कहने का तात्पर्य यह है कि जिनसेनस्वामी और उनके शिष्य गुणभद्राचार्य ने इस महापुराण के निर्माण में जो कौशल दिखाया है वह अन्य कवियों के लिये ईर्ष्या की वस्तु है। यह महापुराण जैन पुराण साहित्य का शिरोमणि है। इसमें सभी अनुयोगों का विस्तृत वर्णन है। आचार्य जिनसेन से उत्तरवर्ती ग्रन्थकारों ने इसे बडी श्रद्धा की दृष्टि से देखा है। आगे चलकर यह '**आर्ष**' नाम से प्रसिद्ध हुआ है और जगह जगह '**तदुक्तं आर्षे**' इन शब्दों के साथ इसके श्लोक उद्धृत मिलते हैं। इसके प्रतिपाद्य विषय को देखकर यह कहा जा सकता है कि जो अन्यत्र ग्रन्थों में प्रतिपादित है वह इसमें प्रतिपादित है, जो इस में प्रतिपादित नहीं है वह कहीं भी प्रतिपादित नहीं है।

जिनसेनाचार्यने पीठिकाबन्ध में जयसेन गुरु की स्तुति के बाद परमेश्वर कवि का उल्लेख किया है और उनके विषय में कहा है—

'वे कवि परमेश्वर लोक में कवियों के द्वारा पूजने योग्य हैं जिन्होंने कि शब्द और अर्थ के संग्रह रूप समस्त पुराण का संग्रह किया था। इन परमेश्वर कवि ने गद्य में समस्त पुराणों की रचना की थी, उसीका आधार लेकर जिनसेनाचार्य ने महापुराण की रचना की है।' इसकी महत्ता बतलाते हुए गुणभद्राचार्य ने कहा है—

'यह आदिनाथ का चरित कवि परमेश्वर के द्वारा कही हुई गद्य कथा के आधार से बनाया गया है। इसमें समस्त छन्द तथा अलंकारों के लक्षण हैं, इसमें सूक्ष्म अर्थ और गूढ पदों की रचना है, वर्णन की अपेक्षा अत्यन्त उत्कृष्ट है, समस्त शास्त्रों को उत्कृष्ट पदार्थों का साक्षात् करानेवाला है, अन्य काव्यों को तिरस्कृत करता है, श्रवण करने योग्य है, व्युत्पन्न बुद्धिवाले पुरुषों के द्वारा ग्रहण करने योग्य है, मिथ्या कवियों के गर्व को नष्ट करनेवाला है और अत्यन्त सुन्दर है। इसे सिद्धान्तग्रन्थों की टीका करनेवाले तथा

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चिरकाल तक शिष्यों का शासन करनेवाले भगवान् जिनसेन ने कहा है। इसका अवशिष्ट भाग निर्मल बुद्धिवाले गुणभद्र ने अति विस्तार के भयसे और क्षेत्र काल के अनुरोध से संक्षेप में संगृहीत किया है'।

आदिपुराण में ६७ छन्दों का प्रयोग हुआ है, तथा १०९७९ श्लोक हैं जिसका अनुष्टुप् छन्दों की अपेक्षा ११४२९ श्लोक प्रमाण होता है।

भगवान् वृषभदेव और सम्राट् भरत ही आदि पुराण के प्रमुख कथानायक हैं। ये इतने अधिक प्रभावशाली हुए हैं कि इनका जैन ग्रन्थों में तो उल्लेख आता ही है उसके शिवाय वेद के मन्त्रों, जैनेतर पुराणों, उपनिषदों आदि में भी उल्लेख पाया जाता है। भागवत में भी मरुदेवी, नाभिराय, वृषभदेव और उनके पुत्र भरत का विस्तृत विवरण दिया है। यह दूसरी बात है कि वह कितने ही अंशों में विभिन्नता रखता है।

उत्तर पुराण

महापुराण का उत्तर भाग उत्तर पुराण के नाम से प्रसिद्ध है। इसके रचयिता गुणभद्राचार्य हैं। इसमें अजितनाथ को आदि लेकर २३ तीर्थंकर, ११ चक्रवर्ती, ९ नारायण, ९ बलभद्र और ९ प्रतिनारायण तथा जीवन्धरस्वामी आदि कुछ विशिष्ट पुरुषों के कथानक दिये हुए हैं। इसकी रचना भी परमेश्वर कवि के गद्यात्मक पुराण के आधारपर हुई होगी। आठवें, सोलहवें, बाईसवें, तेईसवें और चौवीसवें तीर्थंकर को छोडकर अन्य तीर्थंकरों के चरित्र बहुत ही संक्षेप से लिखे गये हैं। इस भाग में कथा की बहुलता ने कवि की कवित्व शक्तीपर आघात किया है। जहां तहां ऐसा मालूम होता है कि कवि येन केन प्रकारेण कथाभाग को पूरा कर आगे बढ जाना चाहते हैं। पर फिर भी बीच बीच में कितने ही ऐसे सुभाषित आ जाते हैं जिनसे पाठक का चित्त प्रसन्न हो जाता है।

उत्तर पुराण में १६ छन्दों का प्रयोग हुआ है और उनमें ७५७५ पद्य हैं। अनुष्टुप छन्द के रूप में उनका ७७७८ परिमाण होता है। आदि पुराण और उत्तर पुराण दोनों को मिलाकर महापुराण का १९२०७ का अनुष्टुप प्रमाण परिमाण है।

महापुराण के रचयिता श्री जिनसेन स्वामी थे जो कि न केवल कवि ही थे, सिद्धान्त शास्त्र के अगाध वैदुष्य से परिपूर्ण थे। इसीलिये तो वे अपने गुरु वीरसेन स्वामि के द्वारा प्रारब्ध जयधवल टीका को पूर्ण कर सके थे। वीरसेन स्वामी बीस हजार श्लोक प्रमाण टीका लिखकर जब स्वर्ग सिधार गये तब जिनसेन ने ४०००० श्लोक प्रमाण टीका लिखकर उसे पूर्ण किया। यह नौवीं शती के अन्तिम में हुए हैं। उत्तर पुराण के रचयिता गुणभद्र, जिनसेन के शिष्य थे और उन्होंने भी जिनसेन के अपूर्ण महापुराण को पूर्ण किया था। यह दशवीं शती के प्रारम्भ के विद्वान थे उस समय की मुनि परम्परा में ज्ञान की कैसी अद्भुत–उपासना थी!

पद्मचरित या पद्मपुराण

संस्कृत पद्मचरित दिगम्बर कथा साहित्य में बहुत प्राचीन ग्रन्थ है। ग्रन्थ के कथानायक आठवे बलभद्र पद्म (राम) तथा आठवे नारायण लक्ष्मण है। दोनों ही व्यक्ति जन जन के श्रद्धा–भाजन है,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

इसलिये उनके विषय में कवि ने जो भी लिखा है वह कवि की अन्तर्वाणी के रूप में उसकी मानस–हिमकन्दरा से निःसृत मानों मन्दाकिनी ही है। प्रसङ्ग पाकर आचार्य रविषेण ने विद्याधर लोक, अन्जना–पवनञ्जय, हनूमान तथा सुकोशल आदि का जो चरित्र चित्रण किया है, उससे ग्रन्थ की रोचकता इतनी अधिक बढ गई है कि ग्रन्थ को एकबार पढना शुरू कर बीच में छोडने की इच्छा ही नहीं होती।

पद्मचरित की भाषा प्रसाद गुण से ओत प्रोत तथा अत्यन्त मनोहारिणी है। वन, नदी, सेना, युद्ध आदि का वर्णन करते हुए कवि ने बहुत ही कमाल किया है। चित्रकूट पर्वत, गङ्गा नदी, तथा वसन्त आदि ऋतुओं का वर्णन आचार्य रविषेण ने जिस खूबी से किया है वैसा तो हम महाकाव्यों में भी नहीं देखते।

इसके रचयिता आचार्य रविषेण हैं। अपनी गुरु परम्परा का उल्लेख इन्होंने इसी पद्मचरितके १२३ वे पर्व के १६७ वे श्लोक में इस प्रकार किया है—

'आसीदिन्द्रगुरोर्दिवाकरयतिः शिष्योऽस्य चार्हन्मुनि–
तस्माल्लक्ष्मणसेनसन्मुनिरदः शिष्यो रविस्तु स्मृतम्'।

अर्थात् इन्द्र गुरु के दिवाकर यति, दिवाकर यति के अर्हन् मुनि, अर्हन्मुनि के लक्ष्मणसेन और लक्ष्मणसेन के रविषेण शिष्य थे।

इस पद्मपुराण की रचना भगवान महावीर का निर्वाण होने के १२०३ वर्ष ६ माह बीत जाने पर अर्थात् ७३४ विक्रमाब्द में पूर्ण हुई है।

हरिवंश पुराण

आचार्य जिनसेन का हरिवंशपुराण दिगम्बर सम्प्रदाय के कथा साहित्य में अपना प्रमुख स्थान रखता है। यह विषय–विवेचना की अपेक्षा तो प्रमुख स्थान रखता ही है, प्राचीनता की अपेक्षा भी संस्कृत कथा ग्रन्थों में तीसरा ग्रन्थ ठहरता है। पहला रविषेण का पद्मपुराण, दूसरा जयसिंह नन्दी का वराङ्गचरित और तीसरा यह जिनसेन का हरिवंश। यद्यपि जिनसेन ने अपने हरिवंश में महासेन की सुलोचना कथा तथा कुछ अन्यान्य ग्रन्थों का उल्लेख किया है परन्तु अभीतक अनुपलब्ध होने के कारण उनके विषय में कुछ कहा नहीं जा सकता। हरिवंश के कर्ता—जिनसेन ने अपने ग्रन्थ के प्रारम्भ में पार्श्वाभ्युदय के कर्ता जिनसेन स्वामी का स्मरण किया है इसलिये इनका महापुराण हरिवंश से पूर्ववर्ती होना चाहिये यह मान्यता उचित नहीं प्रतीत होती, क्योंकि जिस तरह जिनसेन ने अपने हरिवंश पुराण में जिनसेन (प्रथम) का स्मरण करते हुए उनके पार्श्वाभ्युदय का उल्लेख किया है उस तरह महापुराण का नहीं। इससे विदित होता है कि हरिवंश की रचना के पूर्वतक जिनसेन (प्रथम) के महापुराण की रचना है इसलिये तो वह उनके द्वारा पूर्ण नहीं हो सकी, उनके शिष्य गुणभद्र के द्वारा पूर्ण हुई है।

हरिवंश पुराण में जिनसेनाचार्य बाईसवें तीर्थंकर श्री नेमिनाथ भगवान् का चरित्र लिखना चाहते थे परन्तु प्रसंगोपात्त अन्य कथानक भी इसमें लिखे गये हैं। यह बात हरिवंश के प्रत्येक सर्ग के उस पुष्पिका वाक्य से सिद्ध होती है जिसमें उन्होंने 'इति अरिष्टनेमि पुराणसंग्रहे' इसका उल्लेख किया है। भगवान्

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

नेमिनाथ का जीवनआदर्श त्याग का जीवन है। वे हरिवंश गगन के प्रकाशमान सूर्य थे। भगवान् नेमिनाथ के साथ नारायण और बलभद्र पद के धारक श्रीकृष्ण तथा राम का भी कौतुकावह चरित्र इसमें लिखा गया है। पाण्डवों तथा कौरवों का लोकप्रिय चरित्र इसमें बडी सुन्दरता के साथ अङ्कित किया गया है। श्रीकृष्ण के पुत्र प्रद्युम्न का चरित्र भी इसमें अपना पृथक् स्थान रखता है।

हरिवंश पुराण न केवल कथा ग्रन्थ है किन्तु महाकाव्य के गुणोंसे युक्त उच्चकोटि का महाकाव्य भी है। इसके सैंतीसवे सर्ग से नेमिनाथ भगवान् का चरित्र शुरू होता है वही से इसकी साहित्यसुषमा बढती गई है। इसका पचपनवां सर्ग यमकादि अलंकारों से अलंकृत है। अनेक सर्ग सुन्दर सुन्दर छन्दों से विभूषित हैं। ऋतु वर्णन, चन्द्रोदय वर्णन आदि भी अपने ढंग के निराले हैं। नेमिनाथ भगवान् के वैराग्य तथा बलदेव के विलाप का वर्णन करनेके लिये जिनसेन ने जो छन्द चुने हैं वे रस परिपाक के अत्यन्त अनुरूप हैं। श्रीकृष्ण के मृत्यु के बाद बलदेव का करुण–विलाप और स्नेहका चित्रण, लक्ष्मण की मृत्यु के बाद रविषेण के द्वारा पद्मपुराण में वर्णित रामविलाप के अनुरूप है। वह इतना करुण चित्रण हुआ है कि पाठक अश्रुधारा को नहीं रोक सकता। नेमिनाथ के वैराग्य वर्णन को पढकर प्रत्येक मनुष्य का हृदय संसार की माया ममता से विमुख हो जाता है। राजीमती के परित्याग पर पाठक के नेत्रों से सहानुभूति की अश्रुधारा जहां प्रवाहित होती है वहां उनके आदर्श सतीत्व पर जनजन के मानस में उनके प्रति अगाध श्रद्धा भी उत्पन्न होती है। मृत्यु के समय कृष्णमुख से जो उद्गार प्रकट हुए हैं उनसे उनकी महिमा बहुत ही ऊंची उठ जाती है। तीर्थंकर प्रकृति का जिसे बन्ध हुआ है उसके परिणामों में जो समता होना चाहिये वह अन्ततक स्थित रही है।

हरिवंश का लोकवर्णन प्रसिद्ध है जो त्रैलोक्य प्रज्ञप्ति से अनुप्राणित है। किसी पुराण में इतने विस्तार के साथ इस विषय की चर्चा आना खास बात है। पुराण आदि कथा ग्रंथों में लोक आदि का वर्णन संक्षेपरूप में ही किया जाता है परन्तु इसका वर्णन अत्यन्त विस्तार और विशदता को लिये हुए है। कितने ही स्थलों पर करण सूत्रों का भी अच्छा उल्लेख किया गया है।

नेमिनाथ भगवान् की दिव्यध्वनि के प्रकरण को लेकर ग्रन्थकर्ता ने विस्तार के साथ तत्त्वों का निरूपण किया है जिसमें यह एक धर्मशास्त्र भी हो गया है। कथा के साथ साथ बीच बीच में तत्त्वों का निरूपण पढकर पाठक का मन प्रफुल्लित बना रहता है।

हरिवंश पुराण के रचयिता आचार्य जिनसेन पुन्नाटसंघ के थे। इनके गुरु का नाम कीर्तिसेन और दादा गुरु का नाम जिनसेन था। यह जिनसेन, महापुराण के कर्ता जिनसेन से सर्वथा भिन्न है। इन्होंने हरिवंशपुराण के छ्यासठवे सर्ग में भगवान् महावीर से लेकर लोहाचार्य तक की वही आचार्य परम्परा दी है जो कि श्रुतावतार आदि ग्रन्थों में मिलती है परन्तु उसके बाद अर्थात वीर निर्वाण ६८३ वर्ष के अनन्तर जिनसेन ने अपने गुरु कीर्तिषेण तक की जो अविच्छिन्न परम्परा दी है वह अन्यत्र उपलब्ध नहीं है। इस दृष्टि से इस ग्रन्थ का ऐतिहासिक पहलू भी जोरदार हो जाता है। वह आचार्य परम्परा इस प्रकार है—

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

विनयधर, श्रुतिगुप्त, ऋषिगुप्त, शिवगुप्त, मन्दरार्य, मित्रवर्य, बलदेव, बलमित्र, सिंहबल, वीरविद्, पद्मसेन, व्याघ्रहस्ति, नागहस्ति, जितदण्ड, नन्दिषेण, दीपसेन, धरसेन, धर्मसेन, सिंहसेन, नन्दिषेण, ईश्वरसेन, नन्दिषेण, अभयसेन, सिद्धसेन, अभयसेन, भीमसेन, जिनसेन, शान्तिषेण, जयसेन, अमितसेन, कीर्तिषेण और जिनसेन[1] । (हरिवंश के कर्ता)

इसमें अमितसेन को पुन्नाट गण का अग्रणी तथा शत वर्ष जीवी बतलाया है। वीर निर्वाण से लोहाचार्य तक ६८३ वर्ष में २८ आचार्य बतलाये हैं। लोहाचार्य का अस्तित्व वि. सं. २१३ तक अभिमत है और वि. सं. ८४० तक हरिवंश के कर्ता जिनसेन का अस्तित्व सिद्ध है। इस तरह ६२७ वर्ष के अन्तराल में ३१ आचार्यों का होना सुसंगत है।

हरिवंश पुराण की रचना का प्रारम्भ वर्द्धमानपुर में हुआ और समाप्ति दोस्त्रटिका के शान्तिनाथ जिनालय में हुई। इसकी रचना शकसंवत ७०५ में हुई जिसका विक्रम संवत ८४० होता है।

---

१. हरिवंश पुराण, सर्ग ६६, श्लोक २२-२३ ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org